Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

गुप्त गुप्तवंश का प्रशाशन और उसकी विशेषताए

Dr. NandlalNaranChhanga
Assistant Professor – History
R.R. Lalan College, Bhuj
Email :ahirnandlal1989@gmail.com

साराश

गुप्त सम्राटों का शासनकाल प्राचीन भारतीय इतिहास के युग का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें सभ्यता और संस्कृति हर क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति पर है, और हिंदू संस्कृति अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई है। गुप्त काल की सर्वांगीण प्रगति को ध्यान में रखते हुए, इतिहासकारों ने इस काल को 'स्वर्ण युग' की संज्ञा दी है। इसे 'क्लासिकल एज' या 'भारत का पेरी क्लीन युग' आदि नामो से भी जाना जाता है।

निश्चयत: यह काल अपने प्रतापीराजाओं तथा अपनी सर्वोत्कृष्ट संस्कृति के कारण भारतीय इतिहास के पृष्ठों में स्वर्ण के समान प्रकाशित है। मानव जीवन के सभी क्षेत्रों में इस समय समृद्धि और समृद्धि देखी गई थी। कुछ पश्चिमी विद्वानों ने इस अवधि को भारतीय संस्कृति के पुनरुद्धार का काल माना है। लेकिन इस तरह का विचार भ्रामक लगता है क्योंकि इस स्थिति में हमें यह स्वीकार करना होगा कि गुप्त काल से पहले एक युग था जिसमें भारतीय संस्कृति के तत्व विलुप्त थे।

यह पूरी तरह से अप्राकृतिक होगा। हम जानते हैं कि स्थिरता और निरंतरता हमारी संस्कृति की प्रमुख विशेषताएं हैं। भारतीय संस्कृति के विकास की धारा अविरल बहती रही और इसके तत्व कभी विलुप्त नहीं हुए। विकास की यह धारा गुप्ता काल में अपनी परिणति तक पहुँची और यह उन्नति बाद की शताब्दियों के लिए आदर्श बन गई। इसलिए, हम गुप्त काल को भारतीय संस्कृति की परिणति का काल मान सकते हैं, नवजागरण का नहीं। यह इन विशेषताओं के कारण है कि गुप्त काल भारतीय इतिहास के पन्नों में स्वर्ण युग का स्थान बनाने में सफल रहा है।

प्रस्तावना

गुप्त राजवंश प्राचीन भारत के प्रमुख राजवंशों में से एक था।मौर्य वंश के पतन के बाद दीर्घकाल में हर्ष तक भारत में राजनीतिक एकता स्थापित नहीं रही। कुषाण एवं सातवाहनों ने राजनीतिक एकता लाने का प्रयास किया। मौर्योत्तर काल के उपरान्त तीसरी शताब्दी ईस्वी में तीन राजवंशो का उदय हुआ जिसमें मध्य भारत में नाग शक्ति, दक्षिण में वाकाटक तथा पूर्वी में गुप्त वंश प्रमुख हैं। मौर्य वंश के पतन के पश्चात नष्ट हुई राजनीतिक एकता को पुनः स्थापित करने का श्रेय गुप्त वंश को है।गुप्त साम्राज्य की नींव तीसरी शताब्दी के चौथे दशक में

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

तथा उत्थान चौथी शताब्दी की शुरुआत में हुआ। गुप्त वंश का प्रारम्भिक राज्य आधुनिक उत्तर प्रदेश और बिहार में था।

➢ गुप्त वंश की उत्पत्ति

गुप्त सामाज्य का उदय तीसरी शताब्दी के अन्त में प्रयाग के निकट कौशाम्बी में हुआ था। जिस प्राचीनतम गुप्त राजा के बारे में पता चला है वो है श्रीगुप्त। हालांकि प्रभावती गुप्त के पूना ताम्रपत्र अभिलेख में इसे 'आदिराज' कहकर सम्बोधित किया गया है। श्रीगुप्त ने गया में चीनी यात्रियों के लिए एक मंदिर बनवाया था जिसका उल्लेख चीनी यात्री इत्सिंग ने ५०० वर्षों बाद सन् ६७१ से सन् ६९५ के बीच में किया। पुराणों में ये कहा गया है कि आरंभिक गुप्त राजाओं का साम्राज्य गंगा द्रोणी, प्रयाग, साकेत (अयोध्या) तथा मगध में फैला था। श्रीगुप्त के समय में महाराजा की उपाधि सामन्तों को प्रदान की जाती थी, अतः श्रीगुप्त किसी के अधीन शासक था। प्रसिद्ध इतिहासकार के. पी. जायसवाल के अनुसार श्रीगुप्त भारशिवों के अधीन छोटे से राज्य प्रयाग का शासक था। चीनी यात्री इत्सिंग के अनुसार मगध के मृग शिखावन में एक मन्दिर का निर्माण करवाया था। तथा मन्दिर के व्यय में २४ गाँव को दान दिये थे।

➢ राजनैतिक व्यवस्था

गुप्त-साम्राज्य के अन्तर्गत सब प्रदेशों पर गुप्त-सम्राटों का सीधा शासन नहीं था। उनके अधीन अनेक महाराजा, राजा और गणराज्य थे, जो आन्तरिक शासन में स्वतन्त्र थे। सामन्तों को उनके राज्य और शक्ति के अनुसार महाराजा व राजा आदि पदों से कहा जाता था। सब सामन्तों की स्थिति भी एक समान नहीं थी। आर्यावर्त या मध्यदेश के सामन्त गुप्त सम्राटों के अधिक प्रभाव में थे। सुदूरवर्ती सामन्त प्रायः स्वतन्त्र स्थिति रखते थे, यद्यपि वे गुप्त-सम्राटों की अधीनता को स्वीकार करते थे। यही दशा गणराज्यों की थी। शासन की दृष्टि से हम गुप्त-साम्राज्य को निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं-

1. गुप्तवंश के सम्राटों के शासन में विद्यमान प्रदेश- ये शासन की सुगमता के लिए भुक्तियों (प्रान्तों या सूबों) में विभक्त थे। प्रत्येक भुक्ति में अनेक विषय और उनके भी विविध उपविभाग होते थे।
2. आर्यावर्त व मध्यदेश के सामन्त- इनकी यद्यपि पृथक् सत्ता थी पर ये सम्राट् की अधीनता में ही शासन का कार्य करते थे।

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

3. गणराज्य- यौधेय, मालव, आर्जुनायन, आभीर, शनकानीक, काक, खर्परिक, मद्र आदि अनेक गणराज्य गुप्तों के शासन-काल में विद्यमान थे, जो गुप्त सम्राटों के आधिपत्य को स्वीकार करते थे।
4. अधीनस्थ राजा- दक्षिण कोशल, महाकांतार, पिष्टपुर, कोट्टूर, ऐरङडपल्ल, देवराष्ट्र अवमुक्त आदि बहुत-से राज्य इस काल में पृथक रूप से विद्यमान थे। पर उनके राजाओं ने गुप्त-सम्राटों की शक्ति के सम्मुख सिर झुका दिया था।
5. सीमावर्ती राज्य- आसाम, नेपाल, समतल, कर्तृपुर आदि के सीमावर्ती राज्य प्रायः स्वतन्त्र सत्ता रखते थे, पर ये सब गुप्त-सम्राटों को भेंट-उपहार और उनकी आज्ञाओं का पालन कर उन्हें सन्तुष्ट रखते थे। ये सब गुप्त सम्राटों के दरबार में भी उपस्थित होते थे।
6. अनुकूल मित्र- राज्य-सिंहलद्वीप और भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा के राजा गुप्त सम्राटों को भेंट-उपहार और कन्यादान आदि उपायों से मित्र बनाये रखने के लिए उत्सुक रहते थे। यद्यपि उनके राज्य गुप्त-साम्राज्य के अन्तर्गत नहीं थे, तथापि वे गुप्त-सम्राटों को एक प्रकार से अपना अधिपति मानते थे। इन्हें हम अनुकूल मित्र राज्य कह सकते हैं।

सम्राट् को शासन-कार्य में सहायता देने के लिये मन्त्री या सचिव होते थे, जिनकी कोई संख्या निश्चित नहीं थी। नारदस्मृति ने राज्य की एक सभा का उल्लेख किया है, जिसके सभासद् धर्म-शास्त्र में कुशल, अर्थज्ञान में प्रवीण, कुलीन, सत्यवादी और शत्रु व मित्र को एक दृष्टि से देखने वाले होने चाहिए। राजा अपनी राजसभा के इन सभासदों के साथ राज्यकार्य की चिन्ता करता था, और उनके परामर्श के अनुसार कार्य करता था। देश का कानून इस काल में भी परम्परागत धर्म-चरित्र और व्यवहार पर आश्रित था। जनता के कल्याण और लोकरंजन को ही राजा लोग अपना उद्देश्य मानते थे। इसका परिणाम यह था, कि परमप्रतापी गुप्त सम्राट् भी स्वेच्छाचारी व निरंकुश नहीं हो सकते थे।

साम्राज्य के मुख्य पदों पर काम करने वाले कर्मचारियों को कुमारामात्य कहते थे। कुमारामात्य राजघराने के भी होते थे और दूसरे लोग भी। साम्राज्य के विविध अंगो-भुक्ति, विषय आदि का शासन करने के लिए जहाँ इनकी नियुक्ति की जाती थी, वहाँ सेना, न्याय आदि के उच्च पदों पर भी ये कार्य करते थे। कुमारामात्य साम्राज्य की स्थिर सेवा में होते थे और शासन-सूत्र का संचालन इन्हीं के हाथों में रहता था।

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

केन्द्रीय शासन के विविध विभागों को अधिकरण कहते थे। प्रत्येक अधिकरण की अपनी-अपनी मुद्रा (सील) होती थी। गुप्त-काल के विविध शिलालेखों और मुद्राओं आदि से निम्नलिखित अधिकरणों और प्रधान राज-कर्मचारियों के विषय में परिचय मिलता है-

1. महासेनापति- गुप्त सम्राट् स्वयं कुशल सेनानायक और योद्धा थे। वे दिग्विजयों और विजय-यात्राओं के अवसर पर स्वयं सेना का संचालन करते थे। पर उनके अधीन महासेनापति भी होते थे, जो साम्राज्य के विविध भागों में, विशेषतया सीमान्त प्रदेशों में, सैन्यसंचालन के लिये नियत रहते थे। सेना के ये सबसे बड़े पदाधिकारी महासेनापति या महाबलाधिकृत थे।
2. महादण्डनायक- महासेनापति के अधीन अनेक महादण्डनायक होते थे, जो युद्ध के अवसर पर सेना का नेतृत्व करते थे। गुप्त-काल की सेना के तीन प्रधान विभाग होते थे- पदाति, घुड़सवार और हाथी। महादण्डनायकों के अधीन महाश्वपति, अश्वपति, महापीलपति, आदि अनेक सेनानायक रहते थे। साधारण सैनिक को चाट और सेना की छोटी टुकड़ी को चमू कहते थे। चमू का नायक चमूप कहलाता था। युद्ध के लिये परशु शर, अंकुश, शक्ति, तोमर, भिदिपाल, नाराच आदि अनेकविध अस्त्रों को प्रयुक्त किया जाता था।
3. रणभांडारिक- सेना के लिये सब प्रकार की सामग्री को जुटाने का विभाग रणभांडारिक के अधीन होता था।
4. महाबलाधिकृत- सेना, छावनी और व्यूह रचना का विभाग महाबलाध्यक्ष या महाबलाधिकृत के हाथ में रहता था। उसके अधीन अनेक बलाधिकृत होते थे।
5. दंडपाशिक- पुलिस विभाग का सर्वोच्च अधिकारी दंडपाशिक कहलाता था। उसके नीचे खुफिया विभाग के अधिकारी चोरोद्धरणिक, दूत आदि अनेक कर्मचारी रहते थे। पुलिस के साधारण सिपाही को भट कहते थे।
6. महासांधिविग्रहिक- इस उच्च अधिकारी का कार्य पड़ोसी राज्यों, सामन्तों और गणराज्यों के साथ संधि तथा विग्रह की नीति का प्रयोग करना होता था। यह सम्राट् का अत्यन्त विश्वस्त कर्मचारी होता था, जो साम्राज्य की विदेशी नीति का निर्धारण करता था। किन देशों पर आक्रमण किया जाय, अधीनस्थ राजाओं व सामन्तों के प्रति क्या व्यवहार किया जाय, ये सब बातें इसी के द्वारा तय होती थीं।

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

7. विनय-स्थिति-स्थापक- मौर्यकाल में जो कार्य धर्म-महामात्र करते थे, वही गुप्त-काल में विनय-स्थिति-स्थापक करते थे। देश में धर्मनीति की स्थापना, जनता के चरित्र को उन्नत रखना और विविध सम्प्रदायों में मेल-जोल रखना इन्हीं अमात्यों का कार्य था।
8. भांडागाराधिकृत- यह कोष-विभाग का अध्यक्ष होता था।
9. महाक्षपटलिक- राज्य के सब आदेशों का रिकार्ड रखना, इसके अधिकरण का कार्य था। राजकीय आय-व्यय आदि के सब लेखे भी इसी अमात्य द्वारा रखे जाते थे।
10. सर्वाध्यक्ष- यह सम्भवत: साम्राज्य के केन्द्रीय कार्यालय का प्रधान अधिकारी होता था।

इन मुख्य पदाधिकारियों के अतिरिक्त राज्य-कर को वसूल करने का विभाग ध्रुवाधिकरण कहलाता था। इस अधिकरण के अधीन शाल्किक (भूमिकर वसूल करने वाले), गौल्मिक (जंगलों से विविध आमदनी प्राप्त करने वाले), तलवाटक व गोप (ग्रामों के विविध कर्मचारी) आदि अनेक राजपुरुष होते थे।

राजप्रासाद का विभाग बहुत विशाल होता था। महाप्रतीहार और प्रतीहार नाम के अनेक कर्मचारी उसके विविध कार्यों को सँभालते थे। अंत:पुर का रक्षक प्रतिहार होता था जबकि महाप्रतिहार राजमहल का रक्षक होता था।

युवराज-भट्टारक और युवराज के पदों पर राजकुल के व्यक्ति ही नियत किये जाते थे। सम्राट् का बड़ा लड़का युवराज-भट्टारक और अन्य लड़के युवराज कहलाते थे। शासन में इन्हें अनेक महत्त्वपूर्ण पद दिये जाते थे। यदि कोई युवराज (राजपुत्र) कुमारामात्य के रूप में कार्य करे, तो वह युवराज-कुमारामात्य कहलाता था। सम्राट् के निजी स्टाफ में नियुक्त कुमारामात्य को परमभट्टारकपादीय कुमारामात्य कहते थे। इसी प्रकार युवराज-भट्टारक के स्टाफ के बड़े पदाधिकारी युवराज-भट्टारकपादीयकुमारामात्य कहे जाते थे। राजा के विविध पुत्र प्रान्तीय शासक और इसी प्रकार के अन्य ऊंचे राजपदों पर नियुक्त होकर शासन-कार्य में सम्राट् की सहायता करते थे।

पुराने मौर्यकालीन तीर्थों का स्थान अब अधिकरणों ने ले लिया था। उनके प्रधान कर्मचारी अब अधिकृत कहलाते थे। स्मृति ग्रन्थों में न्याय विभाग के लिए कुल और पुत्र संस्थाओं का उल्लेख है।

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

➢ प्रान्तीय शासन

विशाल गुप्त साम्राज्य अनेक राष्ट्रों या देशों में विभक्त था। साम्राज्य में कुल कितने देश या राष्ट्र थे, इसकी ठीक संख्या ज्ञात नहीं है। प्रत्येक राष्ट्र में अनेक भुक्तियाँ और प्रत्येक भुक्ति में अनेक विषय होते थे। भुक्ति को हम वर्तमान समय की कमिश्नरी के समान समझ सकते हैं। गुप्तकालीन शिलालेखों में तीर-भुक्ति (तिरहुत), पुण्ड्रवर्धन भुक्ति (दीनाजपुर, राजशाही आदि), मगध भुक्ति आदि विविध भुक्तियों का उल्लेख आता है। विषय वर्तमान समय के जिलों के समान थे। प्राचीन काल के महाजनपद अब नष्ट हो गये थे। सैकड़ों वर्षों तक मगध साम्राज्य के अधीन रहने के कारण अपनी पृथक् सत्ता की स्मृति अब उनमें बहुत कुछ मन्द पड़ गई थी। अब उनका स्थान राजकुल ने ले लिया था, जिनका निर्माण शासन की सहुलियत की दृष्टि में रखकर किया जाता था।

देश या राष्ट्र के शासक के रूप में प्राय: राजकुल के व्यक्ति नियत होते थे। इन्हें युवराज-कुमारामात्य कहते थे। इनके अपने-अपने महासेनापति, महादंडनायक आदि प्रधान कर्मचारी भी होते थे। युवराज कुमारामात्यों के अधीन भुक्तियों का शासन करने के लिए 'उपरिक' नियत किये जाते थे। उपरिकों की नियुक्ति सीधी सम्राट् द्वारा होती थी। इस पद पर राजकुल के कुमार भी नियत किये जाते थे। प्रत्येक भुक्ति अनेक विषयों में विभक्त होती थी। विषय के शासक विषयपति कहलाते थे। इनकी नियुक्ति भी सम्राट् द्वारा की जाती थी।

गुप्तकाल के जो लेख मिले हैं, जिनसे सुराष्ट्र, मालवा, मन्दसौर और कौशाम्बी-चार राष्ट्रों का परिचय मिलता है। सुराष्ट्र का राष्ट्रिक (शासक) समुद्रगुप्त के समय में पर्णदत्त था। मन्दसौर का शासन बन्धुवर्मा के हाथ में था। इसमें सन्देह नहीं, कि विशाल गुप्त-साम्राज्य में अन्य भी बहुत-से राष्ट्र रहे होंगे, पर उनका उल्लेख उस काल के शिलालेखों में नहीं हुआ है।
भुक्ति के शासक को उपरिक के अतिरिक्त भोगिक, भोगपति और गोप्ता भी कहते थे। सीमान्त प्रदेश के शासक को गोप्ता कहा जाता था। दामोदरगुप्त के समय में पुण्ड्रवर्ध भुक्ति का शासक उपरिकर महाराज राजपुत्र देवपुत्र देवपुत्र देवभट्टारक था। वह राजकुल का था। उससे पूर्व इस पद पर चिरतिदत्त रह चुका था, जो कि राजकुल का नहीं था। इसी तरह चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के शासनकाल में तीरभुक्ति का शासक सम्राट् का पुत्र गोविन्दगुप्त था। इन उपरिक

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

महाराजाओं की बहुत-सी मोहरें इस समय उपलब्ध होती हैं। पुण्ड्रवर्ध नामक प्रांत गुप्तों के अधीन था जिसका प्रशासक चीरोदत्त था।

विषय (जिले) से शासक विषयपति को अपने कार्य में परामर्श देने के लिए एक सभा होती थी, जिसके सभासद विषय-महत्तर (जिले के बड़े लोग) कहलाते थे। इनकी संख्या तीस के लगभग होती थी। नगरश्रेष्ठी, सार्थवाह (काफिलों का प्रमुख), प्रथम कुलिक (शिल्पियों का प्रमुख), और प्रथम कायस्थ (लेखक-श्रेणी का प्रमुख) इस विषय-सभा में अवश्य रहते थे। इनके अतिरिक्त जिले में रहने वाले जनता के अन्य मुख्य लोग भी इस सभा में महत्तर के रूप में रहते थे। सम्भवत: इन महत्तरों की नियुक्ति चुनाव द्वारा नहीं होती थी। विषयपति अपने प्रदेश के मुख्य व्यक्तियों को इस कार्य के लिए नियुक्त कर देता था। इन महत्तरों के कारण जिले के शासन में सर्वसाधारण जनता का पर्याप्त हाथ रहता था। विषयपति को यह भलीभांति मालूम होता रहता था, कि उसके क्षेत्र की जनता क्या सोचती और क्या चाहती है?

विषय के शासक कुमारामात्यों (विषयपतियों) का गुप्त-साम्राज्य के शासन में बड़ा महत्त्व था। अपने प्रदेश की सुरक्षा, शान्ति और व्यवस्था के लिए वे ही उत्तरदायी थे। उनके अधीन राजकीय करों को एकत्र करने के लिए अनेक कर्मचारी रहते थे, जिनके युक्त, आयुक्त, नियुक्त आदि अनेक नाम थे। मौर्यकाल में भी जिले के इन कर्मचारियों को युक्त ही कहते थे। गुप्तकाल में बड़े पदाधिकारियों के नाम बदले गये थे, पर छोटे राजपुरुषों के अब भी वही नाम थे, जो कम-से-कम सात सदियों से भारत में प्रयुक्त होते आ रहे थे। विषयपति के अधीन दंडपाशिक (पुलिस के कर्मचारी), चोरोद्धरणिक (खुफिया पुलिस), आरक्षाधिकृत (जनता के रक्षार्थ नियुक्त कर्मचारी) और दंडनायक (जिले की सेना के अधिकारी) रहते थे।

विषय में अनेक शहर और ग्राम होते थे। शहरों के शासन के लिए पुरपाल नाम का कर्मचारी होता था, जिसकी स्थिति कुमारामात्य की तरह मानी जाती थी। पुरपाल केवल बड़े-बड़े नगरों में ही नियुक्त होते थे। विषय के महत्तर इसे भी शासनकार्य में परामर्श देते थे। पुरों की निगम-सभाएँ अब तक भी विद्यमान थीं, और उनके कारण जनता अपने बहुत-से मामलों की व्यवस्था स्वयं ही किया करती थी। व्यापारियों और शिल्पियों के संघ इस काल में भी विद्यमान थे।

ग्रामों के शासन में पंचायत का बड़ा महत्त्व रहता था। इस युग में पंचायत को पंच-मंडली कहते थे। ग्राम सभा में महत्तर के अलावा अष्टकलाधिकारी ग्रामिक एवं कुटम्बिन होते

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

थे। चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के अन्यतम सेनापति अम्रकादेव ने एक ग्राम की पंच-मंडली को 25 दीनारें एक विशेष प्रयोजन के लिए दी थीं। इसका उल्लेख साँची के एक शिखालेख में किया गया है। महाबलाधिकृत नामक अधिकारी के अधीन सैनिक संगठन होता था। हाथी सेना का प्रधान महापीलपति होता था। घुड़सवार का प्रधान भटाश्वपति होता था। सेना में सामान रखने वाला रणभंडारिक कहलाता था। गुप्तों से पूर्व ग्राम की सभा को पंच-मंडली नहीं कहा जाता था। पर इस युग में भारत की उस पंचायत-प्रणाली का पूरी तरह आरम्भ हो चुका था, जो सैकडों साल बीत जाने पर भी आंशिक रूप में अब तक भी सुरक्षित है।

➢ राजकीय कर

गुप्तकाल के लेखों के अनुशीलन से ज्ञात होता है, कि इस युग में राजकीय आय के निम्नलिखित साधन थे-

1. भागकर- खेती में प्रयुक्त होने वाली जमीन से पैदावार का निश्चित भाग राज्यकर के रूप में लिया जाता था। इस भाग की मात्रा 18 फीसदी से 25 फीसदी तक होती थी। यह भागकर (मालगुजारी) प्राय: पैदावार की शक्ल में ही लिया जाता था। यदि वर्षा न होने या किसी अन्य कारण से फसल अच्छी न हो, तो भागकर की मात्रा स्वयं कम हो जाती थी, क्योंकि किसानों को पैदा हुए अन्न का निश्चित हिस्सा ही मालगुजारी के रूप में देना होता था। भागकर का दूसरा नाम उद्रग भी था।
2. भोगकर- मौर्यकाल में जिस चुंगी को शुल्क संज्ञा कहा जाता था, उसी को गुप्तकाल में भोग कर कहते थे।
3. भूतोवात-प्रत्याय- बाहर से अपने देश में आने वाले और अपने देश से उत्पन्न होने वाले विविध पदार्थों पर जो कर लगता था, उसे भूतोवात-प्रत्याय कहते थे। गुप्तकालीन लेखों में स्थूल रूप से 18 प्रकार के करों का निर्देश किया गया है पर इनका विवरण नहीं दिया गया। पृथक् रूप से केवल तीन करों का ही उल्लेख किया गया है। इस काल की स्मृतियों के अध्ययन से ज्ञात होता है, कि परम्परागत रूप से जो विविध कर मौर्य-युग से चले आते थे, वे गुप्तकाल में भी वसूल किये जाते थे, यद्यपि उनके नाम और दर आदि में कुछ-न-कुछ अन्तर इस समय में अवश्य आ गया था।

➢ अधीनस्थ राज्यो का शासन

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582-046X
International Journal for Research in Applied History
Website : www.anshjournal.com

गुप्त साम्राज्य के अन्तर्गत जो अनेक अधीनस्थ राज्य थे, उन पर सम्राट् के शासन का ढंग यह था कि छोटे सामन्त विषयपति कुमारामात्यों के और बड़े सामन्त मुक्ति के शासन उपरिक महाराज कुमारामात्यों के अधीन होते थे। अपने इन कुमारामात्यों द्वारा गुप्त सम्राट् विविध सामन्तों और अधीनस्थ राजाओं पर अपना नियन्त्रण व निरीक्षण रखते थे। पर अनेक बड़े महासामन्त ऐसे भी थे, जिनके राज्य बहुत विशाल थे और जिनके अपने सन्धिविग्रहिक, भौगिक, विषयपति और उपरिक आदि पदाधिकारी भी होते थे। महाराजा हस्तिन् इसी प्रकार का महासामन्त था।

मौर्ययुग में यह सामन्त पद्धति विकसित नहीं हुई थी। उस काल में पुराने जनपदों की पृथक् सत्ता की स्मृति और सत्ता विद्यमान थी, पर इन जनपदों में अपने धर्म, चरित्र और व्यवहार के अक्षुण्ण रहते हुए भी उनके पृथक् राजा और पृथक् सेनाएँ नहीं थीं। गुप्त काल में बड़े और छोटे सब प्रकार के सामन्त थे, जो अपनी पृथक् सेनाएँ रखते थे। प्रतापी गुप्त-सम्राटों ने इन्हें जीतकर अपने अधीन कर लिया था, पर इनकी स्वतन्त्र सत्ता को नष्ट नहीं किया था।

➢ उपसंहार

शक, यवन, कुषाण आदि के आक्रमणों से भारत में जो अव्यवस्था और अशान्ति उत्पन्न हो गई थी, उसी ने इस पद्धति को जन्म दिया था। पुराने मगध-साम्राज्य के उच्च महामात्रों ने इस परिस्थिति से लाभ उठाकर अपनी शक्ति को बढ़ा लिया था, और वे वंशक्रमानुगत रूप से अपने-अपने प्रदेश में स्वतन्त्र रूप से शासन करने लगे थे। अव्यवस्था के युग में अनेक महत्त्वाकांक्षी शक्तिशाली व्यक्तियों ने भी अपने पृथक् राज्य बना लिये थे। गुप्त सम्राटों ने इन सब राजा-महाराजाओं का अन्त नहीं किया। यही कारण है, कि उनकी शक्ति के शिथिल होते ही ये न केवल पुनः स्वतन्त्र हो गये, अपितु परस्पर युद्धों और विजय-यात्राओं द्वारा अपनी शक्ति के विस्तार में भी तत्पर हो गये। इसी का यह परिणाम हुआ, कि सारे उत्तरी भारत में अव्यवस्था छा गई, और एक प्रकार के मत्स्यन्याय का प्रादुर्भाव हो गया।

संदर्भसूचि

- राय, उदयनारायण (1996). *गुप्त राजवंश तथा उसका युग*, लोकभारती प्रकाशन.
- मजुमदार, आर.सी. (2002). *वाकाटक-गुप्त युग*, वैदिक बुक्स पब्लिकेशन.
- सिंघ, मीनाक्षी (2006). *गुप्तयुग एक मुद्राशास्त्रीय अध्ययन.*